तृतीय अध्याय

व्यंग्य का स्वरूप - महत्व और प्रकार ।

तृतीय अध्याय

व्यंग्य का स्वरूप - महत्व और प्रकार ।

साहित्य मनुष्य के स्वभाव के विकास को कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करता है। मनुष्य की सृजनात्मक और सौंदर्यबोधात्मक शक्ति साहित्य में देखने को मिलती है। मानवी समाज की अच्छाइयाँ बुराइयाँ, विरोध और अंतर्विरोध, वैशिष्ट्य और समानताएँ आदि का गतिशील प्रतिबिंब साहित्य में दिखायी देता है। कारण साहित्य समाज का एक महत्वपूर्ण घटक होता है। साहित्य की एक विधा के रूपमें व्यंग्य साहित्य को काफी प्रतिष्ठा मिली है।

व्यंग्य के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करते समय यह बात समझ में आती है कि, भारत और पश्चिमी देशों के प्राचीन साहित्य में व्यंग्य दिखायी देता है। परंतु साहित्य की एक विशेष प्रवृत्ति के रूपमें उसपर विचार नहीं किया गया था। व्यंग्य जीवन की अभिव्यक्ति करने का महत्व-पूर्ण कार्य संपन्न करता है।

भारत के प्राचीन साहित्य में व्यंग्य का अस्तित्व जरूर दिखायी देता है, परंतु भारतीय काव्यशास्त्र में एक अलग प्रवृत्ति के रूपमें व्यंग्य का उल्लेख नहीं मिलता। इस संदर्भ में जब विद्वानों से चर्चा की जाती है तो वे आमतौरपर हास्य और व्यंग्य को एक ही समझते हैं।

हास्य और व्यंग्य को एक ही समझना बहुत खेद की बात है। किसी पात्र की शारीरिक कुरूपता, वेशभूषा की विचित्रता, आदि कारणों से हास्य निर्माण होता है। ऐसे पात्रों द्वारा कही गयी बातें अधिकतर व्यर्थ ही होती है। हास्य के ऐसे जो प्रसंग होते है, उनमें से एक हल्का अर्थ निकलता है, जिससे आनंद मिलता है, दूसरा अर्थ गंभीर संकेतोंवाला

8263
A

होता है ।

हास्य का अपना अलग महत्व है और हिंदी साहित्य में ऊँचे दर्जे के हास्य का पूर्णतः अभाव नहीं है और अकुशल हाथों पड़ा हुवा व्यंग्यास्त्र स्वयं अपनी ही हँसी का उपकरण बन सकता है । व्यंग्य को स्वतंत्र साहित्यिक विधा मानते समय उसे हास्य के बहुत नजदीक पहुँचाना पडेगा । हास्य, व्यंग्य का साधन बन सकता है, साध्य नहीं ।

पश्चिमी साहित्य में विसंगति को हास्य का प्राण माना गया है । बाह्य रूप, वेश-भूषा, वचनभंगी तक ही विसंगति को सीमित माना गया है । परंतु व्यंग्य अंग्रेजी में जिसे 'सटायर' कहते हैं, हास्य से एकदम अलग है ।

हास्य में हास्यास्पद के प्रति सहज अनुभूति होती है । उसमें प्रेम की भावना होती है । जिस हास्य में सहानुभूति नहीं होती बल्कि विपरीत घृणा या विरोध की प्रधानता होती है, उसे व्यंग्य कहते हैं ।

'व्यंग्य एक प्रकारका आक्षेप है, जो दुर्बलताओं तथा अवगुणोंको प्रदर्शित करता है ।' (१)

व्यंग्यकार एक सामाजिक ठेकेदार होता है, वह समाज की गंदगी को साफ करता है । व्यंग्य शुध्द हास्य और कटु आलोचना के समन्वय से उत्पन्न होता है । अर्थात इसका एक अंग कोमल सीशु से पोषित होता है तो दूसरा घृणा तथा द्वेष से ।

अंग्रेजी के जानसन प्रसिध्द व्यंग्यकार थे । जिनका व्यंग्य कठोर तथा हाजिरजबाबी था । सौंदर्य को बिना देखे उसकी प्रशंसा करनेवाले तथा ईर्ष्या को बिना अनुभव किये उसकी निंदा करनेवालों की उसने हँसी उडायी ।

व्यंग्य में जहाँ सिरसे पावतक हिलानेवाला भाव, आक्रमण की

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR
BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR

भंगिमा, कशाघात का प्रयत्न होता है, वहाँ हास्य उछालने, गुदगुदाने, प्रसन्न करने तथा हरप्रकार के तनाव से मुक्ति पा जाने का परिचायक है। व्यंग्य मुक्त नहीं करता, बल्कि व्यक्ति को बंधनों और प्रतिबध्दताओं में आबध्द करता है। हास्य व्यक्ति को हर प्रकार के बौध्दिक, सामाजिक, जागतिक, बंधन से तनाव रहिततका वातावरण बनाकर गद्गद् होने का भाव पैदा करता है।

आमतौरपर त्रासदी और कामदी में जो अंतर होता है, वही व्यंग्य और हास्य में होता है। त्रासदीका अंत त्रासद, करुण, कष्टदायक होता है, तो कामदी का उत्फुल्ल करनेवाला। भारतीय और पाश्चात्य आचार्यों ने कामदी के मुकाबले में त्रासदी को ही विशेष महत्व दिया है। व्यंग्य में त्रासदी का भाव होते हुवे भी, वह चाहे मुस्कराकर प्रहार करते हुवे भी हास्य का समानधर्मा माना गया है। फिर भी यदि सूक्ष्मता से देखे तो व्यंग्य और हास्य में काफी अंतर होतों है। मानवी जीवन की अनिवार्यताओं में हास्य को बाकायदा शामिल किया गया है। किसी बेढंगी, बेडौल बात को देखकर हँसना और मजा लेना हास्य का गुण है। हास्य की बहुत बड़ी जरूरत को ध्यान में रखते हुवे साहित्य के नौ रसों में से "हास्य" को भी एक मान लिया है। हास्य की प्रक्रिया में मजाक के बिंदु यहाँ - वहाँ बिखरे, हुवे दिखायी देते है। हँसना और हँसाना यही हास्य का उद्देश्य होता है। इसीलिये तो वह चुभनेवाली विसंगति की ओर संकेत नहीं करता। शायद इसीलिये हास्य की अभिव्यक्ति की कला महत्व पूर्ण होते हुवे भी एकांगी दिखायी देती है।

व्यंग्य केवल हँसाता नही, हँसते हँसते विसंगतियों की ओर संकेत करता है, विसंगतियों को व्यक्त करता है। इस प्रकार के व्यंग्य को केवल व्यंग्य कहने की अपेक्षा हास्य - व्यंग्य कहना अधिक उचित होगा। हास्य व्यंग्य की श्रेष्ठ रचनाओं में गुदगुदाते हुवे भी सुन्न करने की पूर्ण क्षमता होती

है । ध्यान इस बातका रखना पडता है कि, उनमें सत्य के साथ किसी प्रकार की खिलवाड करने, उसे गलत-सही ढंग से उलटने पलटने का भाव दूरतक भी दिखायी न पड़े । हास्य-व्यंग्य में हास्य होते हुवे भी व्यंग्य की मात्रा अधिक होती है, वह व्यंग्य के समान ही उद्देश्यपूर्ण होता है । इसीलिये तो वह शुध्द व्यंग्य कहलाने की, बनने की क्षमता रखता है ।

व्यंग्य समाज में व्याप्त हर प्रकार के दोषों को, राजनीति अथवा शासन में मौजूद कई प्रकार की विसंगतियों को व्यक्ति अथवा व्यक्तित्व में पायी जानेवाली संपूर्ण समष्टि की नींव को खोखला बनाने-वाली बुराईयों को अपने तीक्ष्ण शब्द कौशल से बेधता है । तीखा व्यंग्य रचनाओंद्वारा हूबहू एक्स-रे की नजर से व्यक्त करने की जिम्मेदारी को निभाता है । सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक तथा नैतिक दोषों को बगैर नमक मिर्च और टालमटोल के श्रेष्ठ व्यंग्यद्वारा ही व्यक्त किया जा सकता है । इसीलिये तो व्यंग्य के संबंध में कहा गया है -

' व्यंग्य एक ऐसी साहित्यिक अभिव्यक्ति या रचना है, जिसमें व्यक्ति तथा समाज की कमजोरियों, दुर्बलताओं करनी एवं कथनी के अंतरों की समीक्षा अथवा निंदा, भाषा को टेढी भंगिमा देकर अथवा कभी कभी पूर्णत: सपाट शब्दों में प्रहार करते हुवे की जाती है । वह पूर्णत: अगंभीर होते हुवे भी गंभीर हो सकती है, निर्दय लगते हुवे भी दयालू हो सकती है, प्रहारात्मक होते हुवे भी तटस्थ हो सकती है । मखौल लगते हुए भी बौध्दिक हो सकती है । अतिशयोक्ति एवं अतिरंजना का आभास देनेके बावजूद पूर्णत: सत्य हो सकती है । व्यंग्यमें आक्रमण की स्थिति अनिवार्य है ' (२)

हास्य और व्यंग्य दोनों का ही उद्देश्य मूर्खताओं तथा असंगतियों का मजाक उडाना है । परंतु समानता के बावजूद भी दोनों में मुलभूत दृष्टि से अंतर है । इसीलिये तो हास्य जब आलंबन का मजाक सहानुभूतिपूर्ण ढंग से

उड़ाता है, तब व्यंग्य हँसीद्वारा दंड देना चाहता है। हास्य विशुध्द मनोरंजन के उद्देश्य से प्रेरित होता है, तो व्यंग्य का उद्देश्य सुधार करना होता है। व्यंग्य में बुध्दितत्व की प्रधानता पायी जाती है, तो हास्य भावतत्व से युक्त होता है। व्यंग्यकार विकृति को गंभीरता से देखकर, निर्ममता से पर्दाफाश करता है, तो हास्यकार विकृति का केवल वर्णन कर संतोष कर लेता है। क्योंकि हास्यकार असंगतियों के चित्रण में रस लेता है, और व्यंग्यकार विद्रोह को वाणी देता है। इसीलिये तो बर्नार्ड शॉ ने कहा है - `व्यंग्यकार का हास्य कठोर हास्य होता है, उसमें तरलता नहीं होती।` हास्य स्थूल और सतही होता है, व्यंग्य अत्यंत सूक्ष्म और दुर्बोध।

उपर्युक्त चर्चा के आधारपर हम कह सकते है कि, हास्य और व्यंग्य स्पष्टत: भिन्न विधाएँ है, परंतु दोनों दूध और पानी की तरह मिश्रित है। फिर भी व्यंग्य का अपना एक अलग अस्तित्व है, अपनी एक विशेष सत्ता है।

व्यंग्यकार ही सामाजिक तत्वोंपर अंकुश लगाता है। इसीकारण व्यंग्यकार गैरजिम्मेदार, असृजनात्मक, तथा नकारात्मक होता है, यह धारणा बिल्कुल गलत लगती है। कबीर ने अपने समय में हिंदू तथा मुसल-मानों के बढते हुवे आपसी मनमुटाव को अपने व्यंग्य के माध्यम से कितना कम कर दिया है, यह बात तो सर्वविदित है।

व्यंग्यकार की अपनी सीमाएँ होती है। इन सीमाओं में रहकर सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक विकृतियों का पर्दाफाश करना, ढोंगी, पाखंडियों तथा भ्रष्टाचारियों के मुखौटों को समाज के सामने खोलकर रखना व्यंग्यकार का उद्देश होता है। समाज के कूडा-करकट को साफ करना व्यंग्यकार का कार्य होता है, पर इस कार्य में औचित्य का स्थान रखना आवश्यक होता है। व्यंग्य सदैव सोद्देश्य होता है। सुधारात्मक दृष्टिकोण

व्यंग्य का एक आवश्यक अंग है। सकारण व्यंग्य ही प्रभावकारी होता है। प्रभावकारी व्यंग्य अपने उद्देश्य में जरूर सफल होता है। चाहे वह समाज - सुधार हो, राजनीतिक सुधार हो या अन्य कोई सुधार।

अंग्रेजी के महान व्यंग्यकार नानेथन स्विफ्ट के अनुसार जिन लोगों को धर्म का, नैतिकता का, दंड का डर नहीं है, ऐसे लोगों को कर्तव्य पथ-पर लाने के लिये व्यंग्य कानून की सहायता करता है। शायद इसी उद्देश्य से विश्व में व्यंग्य का प्रारंभ हुआ होगा। उनके मतानुसार -

" व्यंग्य एक प्रकारका शीशा है, जिसमें देखनेवाले को अपने मुँहके अतिरिक्त प्रत्येक का मुँह दिखलाई देता है। यही कारण है कि, विश्व में व्यंग्य का स्वागतकिया जाता है तथा बहुत कम लोग इससे अपने को पीडित अनुभव करते है।" (३)

शिष्टता, शालीनता, साहित्यिकता के होने से ही व्यंग्य प्रभावकारी होता है। व्यंग्य में वक्रता का होना बहुत जरूरी है, क्योंकि जब व्यंग्य सपाट होता है, तो खुली निंदा अथवा गाली गलौज का रूप धारण करता है। " प्रभावी व्यंग्य तीर के समान होना चाहिए, जो कि कम से कम समय में लक्ष्य को भेद दें। थोडे में बहुत कह देना व्यंग्य का गुण है। विस्तार इसके प्रभाव को नष्ट कर देता है।" इसप्रकार का मत प्रो.गुडमैन ने व्यंग्य की संक्षिप्तता के संदर्भ में व्यक्त किया है।

उपदेशक व्यक्ति को सुधारने के लिये धार्मिक विधान रखता है, नीतिकार अच्छे और बुरे गुण - दोषों का वर्णन कर उसमें शिक्षा लेने की प्रेरणा देता है, परंतु व्यंग्यकार सुधार का कार्य व्यंगरूपी चाकू से कर लेता है।

व्यंग्यकी अत्यंत हल्की झलक " चुटकुलों तथा मजाक " में देखने को

मिलती है। व्यंग्य जब हलकी चुटकी के रूप में होता है, तो वह व्यक्ति और समाज की अपेक्षाकृत दुर्बलताओंपर टीका - टिप्पणी करता है। परंतु जब यह दुर्बलता तथा कुरूपता अधिक मात्रा में होती है, तो उसपर की गयी लेखक की चोट अधिक खुली और करारी होती है। इस तीखी चोट के एक एक शब्द के चुभने से खून बहने लगता है, तो वहाँ हास्य नहीं, व्यंग्य होता है, जो विद्रूप की सीमातक पहुँच जाता है। हास्य और व्यंग्य की मूल धारणाओं की दृष्टि से सोचा जायें, तो हरिशंकर परसाई का व्यंग्य इन दोनों के बीच का प्रतित होता है। इसीप्रकार के व्यंग्यात्मक लेखन द्वारा उन्होंने अत्यंत निर्ममतापूर्वक व्यक्ति और समाज के दूषित पक्षों तथा कुरूपताओंपर कड़ा प्रहार किया है।

व्यंग्य के संदर्भ में कितने ही विद्वानों ने अपने मत व्यक्त किये हैं। हजारीप्रसाद द्विवेदी के अनुसार -

' व्यंग्य वह है, जहाँ कहनेवाला अधरोष्ठ में हँस रहा हो और सुननेवाला तिलमिला उठा हो। और फिर कहनेवाले को जबाब देना अपने को और भी उपहासात्मक बना लेना हो जाता है। व्यंग्य की यह प्रवृत्ति उसे सुधारक ही नही, लाजवाब और आक्रमक भी सिध्द करती है।' (४)

हरिशंकर परसाई ने व्यंग्य को 'स्पिरिट' के रूपमें स्वीकार किया है। व्यंग्यकार जीवन में फैली दुर्बलताओं का विनाश कर के सद्भावनाओं की स्थापना के लिये सतत प्रयत्न करता है। इस दृष्टि से देखा जायें तो व्यंग्य एक गंभीर कर्म है। यह बात सच लगने लगती है। फिर भी व्यंग्य मानव सहानुभूति से ही पैदा होता है। इस बातपर परसाई विश्वास करते है।

मनुष्य की जिंदगी एक जटिल चीज है, परंतु इसमें केवल हँसना तथा रोना जैसी चीजें शामिल नहीं है। करूणा की अंतर्धारा भी जिंदगी के कितने

ही सार्थक व्यंग्यो में दिखायी देती है। चेरवव जैसे लेखकों का उल्लेख इसी संदर्भ में किया जा सकता है, जिनका सामाजिक, राजनीतिक, तथा आर्थिक परिवेश से संबंधित व्यंग्य का कार्यक्षेत्र काफी विस्तृत है।

व्यंग्य लेखन की प्रक्रिया में लेखक जीवन तथा समाज से `तटस्थ` नहीं रहता। परसाईजी ने जीवन व जगत से तटस्थ व्यक्ति को व्यंग्य लेखक नहीं, बल्कि जोकर माना है। सामाजिक संघर्ष में बिना शामिल हुवे जो व्यंग्य लिखा जाता है, वह गैरजिम्मेदारी का काम हो सकता है। व्यंग्यकार अपनी निजी यातना और अनुभव को एक व्यापक संवेदनीय अर्थ देता है। इसीकारण तो वह व्यंग्य सार्थक बनता है। व्यक्तिगत स्तर से ऊपर उठने में ही व्यंग्य की ताकद होती है। ऐसी निर्वैक्तिक तटस्थता का विकास किया जाता है कि, हम आपपर भी हँस सकें तथा व्यंग्य कर सकें। व्यंग्यकार जब अपने आप को भी क्षमा नहीं करता तभी सार्थक और जिम्मेदारी पूर्ण व्यंग्य बनता है। इस प्रकार का व्यंग्य कितना महत्वपूर्ण होता है यह बात हरिशंकर परसाई के व्यक्तित्व से स्पष्ट हो जाती है। `जो कानून, गीता, गंगाजल अथवा जनता की निगाहों से बच जाते है, उन्हें व्यंग्यकार अपने व्यंग्य से आहत कर देता है। व्यंग्यकार जब व्यंग्य करता है, तो वह उस किसान की तरह होता है, जो फसल को नुकसान पहुँचानेवाले कौए को मारकर अपने खेत में उल्टा टाँग देता है जिससे दुसरे कौए डरें और फसल का नुकसान न करें।` (५)

सत्य की अभिव्यक्ति करना व्यंग्य का उद्दिष्ट होता है और उसके लिये व्यंग्यकार को अपने समय से संबंधित रहते हुवे दर्शक, भोक्ता और आलोचक बनना पडता है। इसके लिये व्यंग्यकार को एक साथ कितनीही विविध परिस्थितियों तथा परिवेशगत अवस्थाओं से गुजरकर, यथार्थ को स्पष्ट रूपसे चित्रित करना पडता है। जनता में हलचल पैदा करने के लिये

जीवन से सीधा साक्षात्कार किये बिना काम नहीं चल सकता । इसलिये व्यंग्यकार को जीवन से बिकट साक्षात्कार करना पडता है।

व्यंग्य में एक बलवती प्रेरणा तथा पूर्वयोजना होती है। जिसके आधारपर एक विशेष उद्देश्य को स्पष्ट करने में सफलता पायी जा सकती है। व्यंग्य की यही उद्देश्यपूर्णता उसे इमानदार सच्चा और संवेदनशील सिध्द करती है। व्यंग्य निराश तथा निरुत्साही समाज जीवन में आशा का संदेश लाता है, उसमें स्फूर्ति जगाता है और उसे संघर्ष के लिये तैयार करता है। व्यंग्यकार अपने व्यंग्यद्वारा जीवन के सीलन भरे बदबूदार कमरे में खुली हवाका एक झोंका भरने का उद्देश्य लेकर चलता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद व्यंग्य साहित्य अधिक मात्रा में लिखा गया। क्योंकि नयी पीढीमें आक्रोश है, घुटन है, कुंठा है तथा वह समाज में फैली हुवी विषमतावों के प्रति सशक्त प्रतिक्रिया व्यक्त करती है।

वैसे देखा जायें तो वर्तमान काल में राजनैतिक व्यंग्य अधिक मात्रा में लिखा जा रहा है। क्योंकि आजकल देखा जाता है कि, राजनीति अधिक मात्रा में विकृत हो गयी है। दल-बदल की बढती हुवी प्रवृत्ति, राजनैतिक नेतावों की धनलिप्सा, कथनी और करनी में अंतर, सरकारी धनका अपव्यय, बेरोजगारी, मँहगाई, छात्र असंतोष, विश्वविद्यालयों में गुटबंदी, व्यापारियों के अनैतिक कार्य, मूर्ति चोरी, तस्कर-व्यापार, अंग्रेजी प्रेम आदि बीमारियों को दूर करने के लिये व्यंग्यरूपी औषधि की ही बहुत आवश्यकता है।

व्यंग्यका महत्व :

साहित्य मनुष्य के स्वभाव को कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करता है। मनुष्य की अच्छाइयाँ - बुराइयाँ, विरोध - अंतर्विरोध,वैशिष्टय और समानताएँ सबकुछ साहित्य में दिखायी देता है।दूसरे शब्दों में कहा जा सकता

है कि, साहित्य समाज का गतिशील प्रतिबिंब होने के कारण समाज की संपूर्णता का वह एक महत्वपूर्ण घटक है। साहित्य में मनुष्य जीवन की अभिव्यक्ति के लिये विविध विधाओं का प्रयोग किया जाता है। जैसे - कहानी, निबंध, उपन्यास, संस्मरण, रेखाचित्र आदि। इन विधाओं में व्यंग्य को माध्यम के रूपमें स्वीकारते हुये मनुष्य जीवन को वास्तविकता के साथ प्रस्तुत किया जाता है।

स्वातंत्र्योत्तर कालखंड में हास्य-व्यंग्य की एक धारा प्रवाहित हुयी और आगे चलकर इसमें से व्यंग्य ने अपना एक अलग व्यक्तित्व प्राप्त कर लिया। व्यंग्य की अभिव्यक्ति में लेखक की अपनी शिक्षा - दीक्षा तथा सामाजिक अनुभव काम आते हैं। व्यंग्यकृतियों का स्वरूप व्यंग्य लेखक के मानसिक गठनपर आधारित होता है। जो व्यंग्यकार अपने लेखन में अधिक गंभीर नहीं होना चाहते हैं, वे हास्य की छींटे भी उड़ाने चलते हैं। तो बौध्दिक दृष्टि से विकसित व्यंग्य लेखक हास्य का तिरस्कार करेगा। वह अधिकाधिक पैने और चुभनेवाले व्यंग्य का ही निर्माण करेगा। यहाँपर हम देखते हैं कि, हास्य व्यंग्य से अलग रह जाता है।

आज जब कि जीवन में विकृतियाँ बढ़ती जा रही है, व्यंग्य-विशुध्द व्यंग्य - एक लोकप्रिय साहित्य के रूपमें मान्यता प्राप्त कर रहा है। व्यंग्य लेखन में लेखक के हृदय का आक्रोश व्यक्त होता है। शायद इसीलिये वर्तमान युगमें कटु व्यंग्य का प्रचलन अधिकता से हो रहा है। कितनेही लेखक और पाठक आज जीवन की असंगतियों और विरूपताओं को भोग रहे हैं, ऐसे समय उनकी झुंझलाहट, क्रोध, घृणा और क्रूरता व्यंग्य का शरीर धारण कर लेती है और इसमें कोई अस्वाभाविकता नहीं दिखाई देती।

साहित्य में शिष्ट और संस्कृत व्यंग्य ही प्रतिष्ठित होता है। क्योंकि जब व्यंग्य अशिष्ट और असंस्कृतता के स्तरपर आता है, तो साहित्य

में उसका अवमूल्यन होता है ।

व्यंग्यकार की शक्ति उसकी तटस्थता में होती है । जब हम स्वयंपर तथा स्वंय के समाज पर व्यंग्य करते हैं, तो उसमें सौंदर्य है, लेकिन व्यक्तिगत स्तरपर एक-दूसरे की व्यंग्यपूर्ण भर्त्सना में कुरूपता आती है । इसीलिये तो व्यक्ति, धर्म,संप्रदाय आदि को लक्ष्य कर के लिखा गया व्यंग्य हीन कोटि का व्यंग्य होता है । वह अल्पजीवी होता है ।

समाज में परिवर्तन लाना, सुधार लाना व्यंग्य का एकमात्र उद्देश्य होता है । इस दृष्टि से देखा जायें तो इसप्रकार की महान उपलब्धि प्राप्त करने के लिये कोशिश करनेवाला व्यंग्यकार एक समाज सुधारक के रूपमें हमारे सामने आता है । वह विवेचक होता है, पीडक नहीं ।

किसी भी चीज, वस्तु का महत्व उसके उद्देश्य में और उद्देश्यपूर्ति के लिये किये जानेवाले कार्योंपर आधारित होता है । इतिहास इस बातका साक्षी है कि, समाज में नित्य रूपसे परिवर्तन होते आये है । कल का समाज आज नहीं और जैसा समाज आज देखते है, शायद आनेवाले कल का समाज और भी बदले हुवे रूपमें हमें नजर आयेगा । समाज के बदलते स्वरूप के साथ साथ उसकी धारणाएँ भी बदलती है । इन्हीं धारणाओं के अनुसार साहित्य में भी परिवर्तन, बदलाव लाना जरूरी होता है । जरूरत के अनुसार साहित्य में बदलती हुवी रूचि को पाया भी गया है । अलग अलग परिस्थितियों में, अलग अलग युगों में समाज के विविध प्रश्नों से जूझने के लिये प्रबुध्द लेखकों ने जिस हथकंडे की सृष्टि की है, उसे व्यंग्य के नाम से पहचाना जाता है । अपने भीतर से बाहर तक व्याप्त ढोंग, दबाव और उत्पीड़न के विरूध्द व्यंग्य एक प्रकार का प्रहार है । शायद व्यंग्य की इसी खासियत के कारण हर काल उसका नि:संदेह महत्व रहा है ।

जब हम देखते है, कबीर चुनौती देते हुवे लुआठी लेकर बाजार में खडे

है, जो अपना घर फूंक डालने का साहस रखते है, वही उनके साथ आ सकता है, तो वह व्यंग्यकार की प्रतिबध्दता, साहस, शिल्प की प्रौढी को तो परिभाषित करते ही हैं, लेखकीय स्वतंत्रता की भी व्याख्या करते प्रतीत होते हैं। इसी स्वतंत्र प्रवृत्ति के आधारपर वे सामान्य मानव के भीतर सोयी महामानवीय संभावना को उद्बोधित करने का प्रयास करते है। इस दृष्टि से देखा जावें तो कबीर ऐसे क्रांतिकारी है, जो ढोंग और पाखंडपर सीधा प्रहार करते है, और यही फकीर हिंदी का सबसे बड़ा व्यंग्यकार है। जागरूकता, सामाजिक प्रतिबध्दता और लेखकीय स्वतत्रता के वे मूर्ति थे। इसी जागरूकता, प्रतिबध्दता और लेखकीय स्वतंत्रता को व्यंग्य के माध्यम से व्यक्त किया है। इस प्रकार एक व्यंग्यकार अपनी सामाजिक समझ, जिम्मेदारी और अपने आम आदमी के साथ खड़े होने की तैयारी में दूसरे लेखकों से अधिक सतर्क, दृष्टिवान और योध्दा होता है। यदि व्यंग्यकार की इन विशेषताओं की और देखा जाये तो उसका व्यंग्य का जो प्रभावी हथियार है, उसका महत्त्व अपने आप समझ में आयेगा।

व्यंग्य एक भावना है, जो त्वरित होकर समय और कर्तव्य कर्म से प्रेरित रहती है। इसीलिये वह समाज के सडेगलेपनपर, सडी-गली व्यवस्था-पर ` प्रहार और सृजन ` के रास्ते निश्चित करती है। व्यंग्यकार प्रहार विशेष हेतु से प्रेरित होने के कारण केवल विदूषकत्व और हंसानेतक सीमित नहीं है, बल्कि समाज के क्रांतिकारी विचार, संहार और सृजन की द्वंद्वात्मकता के और आगे आते है।

आर्थिक और सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक,साहित्यिक और सांस्कृतिक पूरी व्यवस्थागत हास्यास्पदताओं, विसंगतियों और छद्मों को खोलने-उघाडने और उनपर भरपूर प्रहार करने के लिहाज से व्यंग्य की विधा काफी कारगर साबित हो सकती है। ग्रीक, रोमन, लैटिन, फ्रेंच, अंग्रेजी

और रूसी साहित्य में व्यंग्य की जो समृध्द परंपरा है, वह इसी बात का प्रमाण है। अंग्रेजी में व्यंग्य प्रधान कृतियों का अपना स्वतंत्र आस्तित्व है। व्यंग्य काव्य, व्यंग्य उपन्यासों के साथ एब्सर्ड नाटक भी व्यंग्य के ही एक रूप है। हिंदी में भी व्यंग्य कविताओं और व्यंग्य उपन्यासों की अपनी परंपरा है। कहानी आंदोलन के भीतर मौजूद यह धारा एक जटिल ऐतिहासिक संदर्भ प्रस्तुत करती है।

प्रगतिशील आंदोलन के समय में उपजे इस माध्यम में सामाजिक यथार्थ को पहचानने, पकडने और पूरी धार के साथ अभिव्यक्ति देने की इतनी क्षमता है कि, उसे स्वतंत्र रूपमें सामने लाने की जरूरत महसूस हुवी। इसी जरूरत के मुताबिक जो कोशिशें की गयी, उसमें भारतेंदु ने पहला कदम उठाया था, परसाईजी की रचनाशीलता उसी का सुफल है। शायद इसीलिये व्यंग्य को स्वतंत्र विधा का दर्जा न मिलने पर भी अपने माध्यम के रूपमें भी वह अतिशय महत्व का है।

स्वतंत्रता बाद के हमारे जीवन मूल्यों के विघटन का इतिहास जब भी लिखा जायेगा तो परसाई का साहित्य संदर्भसामग्री का काम करेगा। समसामयिक जीवन की व्याख्या, उसका विश्लेषण और उसकी भर्त्सना तथा विडंबना के लिये व्यंग्य से बढकर दूसरा हथियार नहीं हो सकता, यह बात परसाईजी ने अच्छीतरह जान ली थी। इसीलिये तो उन्होंने अपनी अभि-व्यक्ति के लिये व्यंग्य की विधा चुनी है।

तात्कालिकता और संदर्भों से लगाव व्यंग्य के सबसे महत्वपूर्ण गुण है। शाश्वत साहित्य के बारे में लंबी-चौडी चर्चाएँ करनेवाले आलोचक व्यंग्य को पत्रकारिता के दर्जे की वस्तु मानते है और केवल चटखारेबाजी उसका उद्देश्य समझते हैं। व्यंग्य का प्रयोग किसी गंभीर उद्देश्यपूर्ति के लिये किया जाता है, इस बात को वे मानते ही नहीं। ऐसे आलोचकों और विचारकों ने आदर्श साहित्य के जो मानदंड स्वीकृत किये है, उनकी

धज्जियाँ उडाने का काम व्यंग्य करता है। परिणाम यह होता है कि, ऐसे लोगों की नजर में व्यंग्य लेखक हल्का, सडकछाप या [illegible] लेखक होता है। ये ही लोग व्यंग्य को साहित्य की `शेडयूल्ड कास्ट` विधा मानते है और इन्हीं मर्यादावादी लोगों ने कबीर को भी कवि मानने से इन्कार किया था। पर ये लोग निश्चित रूपसे गलत धारणाओं के शिकार बन गये है, यह बात असलियत का पता चलनेपर सिध्द होती है। वास्तविकता को देखते हुवे व्यंग्य का महत्व मानना ही पडता है। विशेषात: आज के जमाने की तेज रफ्तार के साथ दौडने का काम केवल व्यंग्य ही कर सकता है। समाज की जटिलता, संकीर्णता का अहसास केवल व्यंग्य को ही होता है। इस दृष्टि से व्यंग्य का महत्व अनन्यसाधारण है।

व्यंग्य के प्रकार :

व्यष्टि से समष्टितक के सभी मानवीय क्रिया-कलापों के प्रति बौध्दिक विद्रोह भी व्यंग्य है। बुध्दिकी पैनी और चुटीली प्रतिक्रिया ही व्यग्य का आधार है। इस संदर्भ में देखा जाये तो व्यंग्य एक सार्थक, स्वस्थ, बौध्दिक विद्रोह है। तीखी व्यंग्याभिव्यक्तियों के आधारपर ही श्रेष्ठ साहित्य की निर्मिति की जा सकती है। हिंदी में आँखें तरेरते हुवे व्यंग्य और आँखे चुराते हुवे व्यंग्य को एक साथ देखा जा सकता है। अर्थात अनुभव की मात्रा के अनुसार व्यंग्य का स्वरूप निश्चित हो जाता है।

एक व्यग्यकार के लिये कभी भी विषयों की कमी नहीं रहती। इसलिये तो सत्ता प्रतिष्ठानों की लालफीताशाही, नेताओं की धूर्तता, पाशविकता, देशद्रोहिता, अनैतिकता, चुनावों के हथकंडे, पुलिस का बीभत्स आचरण, आधुनिक प्रेम का सतहीपन, जातपांत, अंधविश्वास, आम आदमी की तकलीफें, फिल्में, बेकारी गरीबी जैसे कितने ही अनगिनत विषयों की चीरफाड व्यंग्यकार अपनी लेखनी से करता है।

हरएक प्रकार के दोषायुक्त पहलू का सही चित्रण, उसपर प्रहार और व्यक्ति की चेतना को झटका देनेवाला व्यंग्य समसामयिक घटनाओं के प्रति पैनी दृष्टि रखता है अधिक सतर्क रहता है। व्यंग्य समाज के विभिन्न आतरिक और बाह्य दोषों के विरूध्द चलनेवाली सतत क्रांति है, जिसमें व्यंग्यकार सामान्य जन के प्रति प्रतिबध्द है। इसी प्रतिबध्दता को ध्यान में रखते हुवे हरिशंकर परसाई ने कहा है - ` जागनेवाले का रोना कभी खत्म नहीं होता, व्यंग्य लेखक की गर्दिश भी कभी खत्म नहीं होगी।`

जबतक मानव से संलग्न व्यवस्था है, तबतक व्यंग्यलेखन की एक प्राकृत आवश्यकता है। आधुनिक हिंदी साहित्य की इतनी महत्वपूर्ण धारा होने के बावजूद और पुरानी तथा नयी पीढ़ी के चर्चित साहित्यिकोंद्वारा, अपनी रचनाओं में व्यंग्य को प्रमुखता से स्थान देने के बाद भी उसे उचित सम्मान तथा महत्व देने में व्यंग्य की जाने-अनजाने में उपेक्षा की गयी है। फिर भी यह बात सौ फीसदी सही है कि, व्यंग्य एक विशुध्द जीवन सत्य है।

व्यंग्य लेखन की रचना - प्रक्रिया तथा स्वयपूर्णता के लिये सबसे अधिक उपयुक्त और अनिवार्य बात होती है, विसंगतियाँ। मनुष्य के मूल में होनेवाली ये विसंगतियाँ उसके संपूर्ण जीवन में भी दिखायी देती है। सामान्य से सामान्य स्थिति से लेकर गहन-गंभीर समस्याओं और मानवीय यंत्रणाओं तक इन विसंगतियों का अस्तित्व देखने को मिलता है।

जब औचित्यपर अनौचित्य का प्रभाव दिखायी देता है, समता की स्थिति में विषमताद्वारा बाधा उत्पन्न की जाती है, सिलसिले में बेसिलसिलापन प्रवेश करता है, तभी विसंगतियाँ निर्माण होती है। आज समाज में ` जिसकी लाठी, उसकी भैंस` वाली मनोवृत्ति पनप रही है। वस्तुत भगवान ने सभी मनुष्यों को एक समान बनाया है। न कोई छोटा है,

न कोई बड़ा। फिर भी मनुष्य की स्वार्थी प्रवृत्ति के कारण समाज में पद, प्रतिष्ठा, धन, संपन्नता, धर्म-जाति के आधारपर मनुष्यों में साफ अंतर दिखायी देता है। और यही अंतर सामाजिक विसंगति को जन्म देता है। विसंगति के अनुपयुक्तता, अनौचित्य, असंबंध्दता, बेमेलपन, विषामता, असमानता जैसे कितनेही पर्यायी शब्द है, जो अर्थ के स्तरपर 'असंगति' की ओर संकेत करते है या एक ऐसी स्थिति सामने आ जाती है, जिसे महसूस कर कुछ अनमना सा लगता है, जागरूक का हृदय बेचैन हो उठता है। इसी बेचैनी को व्यंग्य के माध्यम से व्यक्त करनेवाली बात निश्चित रूपसे हास्यपूर्ण बातों से बिल्कुल अलग और अपनी स्वतंत्र सत्ता रखनेवाली होती है।

'संगति के कुछ मान बने हुवे होते है - जैसे इतने बड़े शरीरमें इतनी बडी नाक होनी चाहिए। उससे बडी होती है, तो हँसी आती है। आदमी आदमी की बोली बोले ऐसी संगति मानी हुवी है। वह कुत्ते जैसा भौंके तो यह विसंगति हुवी और हँसी का कारण।' (6)

इसप्रकार की विसंगति में मौजूद होनेवाले कारणों को कोई भी व्यंग्यलेखक महत्व नहीं देता। इन कारणों को केवल हास्य-रस के लेखक ही महत्त्व दे सकते हैं, देते हैं। इस बात को विशेष रूपसे स्पष्ट करते हुवे हरिशंकर परसाईजी ने लिखा है -

'मगर विसंगतियों के भी स्तर और प्रकार होते है। आदमी कुत्ते की बोली बोले यह विसंगति हुवी और वनमहोत्सव का आयोजन करने के लिये पेड़ काटकर साफ किए जाएँ, जहाँ मंत्री महोदय गुलाबके 'वृक्ष' की कलम रोपें - यह भी एक विसंगति है। दोनों में भेद है, गो दोनोंमें हँसी आती है' (7)

विसंगति की इस व्याख्या को एकमात्र सूत्र के रूपमें स्वीकार न भी

करें, तो भी हमें इस बात को मानना ही पडेगा कि, केवल हँसानेवाली, पाठक अथवा दर्शक को विदूषकपन की सीमा में धकेलनेवाली, जीवन के व्यापक तथा जटिल संदर्भों को न उठानेवाली विसंगति सार्थक और सही व्यंग्य के काम नहीं आ सकती । इन्ही विसंगतियों को खरोंचने, चीरफाड़ करने तथा उनका मूलक अन्वेषण करने के लिये साहित्य में व्यंग्याभिव्यक्ति का एकमात्र औजार ही विशेष महत्व का होता है ।

जीवन के विविध क्षेत्रों में या दायरों में व्याप्त विसंगतियाँ रचनाकार की चेतना को झकझोरती है, उसपर आघात करती है, व्यंग्य-द्वारा मूर्त रूप देनें की प्रेरणा देती है । जीवन और जगत में व्याप्त इन विसंगतियों की कोई सीमा नहीं होती है । व्यक्ति अथवा व्यक्तित्व की अंतरंग पर्तों से लेकर समष्टि के ज्ञात-अज्ञात प्रकोष्ठों, राष्ट्रों की सीमाओं से परे अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक संधियों और दुरभिसंधियों, धर्म की चारदीवारी से लेकर नैतिकता की दुहाइयों और समाज एवं शासन के विविध बिंदुओंपर विसंगतियाँ प्राय अनेक रूपों में मिलती है ।

विसंगतियाँ स्थूल रूपसे सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक,राजनीतिक प्रशासनिक, आर्थिक तथा वैयक्तिक आदि रूपों में देखी जा सकती है । ये सारे रूप एक दुसरे में मिले हुवे होते है कि, उन्हें एक-दुसरे से अलग करना कठिन होता है । सामाजिक विसंगति आर्थिक विसंगति के कारण निर्माण हो सकती है । वैयक्तिक विसंगति राजनीति को उस समय प्रभावित करती है, जब व्यक्ति राजनीति से संबंधित होता है । कभी कभी सांस्कृतिक विसंगति भी किसी व्यक्ति को बिल्कुल असांस्कृतिक रूपमें पेश करते हुवे वैयक्तिक विसंगति की निर्मिति कर सकती है । इसलिए तो यह वर्गीकरण केवल हमारी सुविधा की दृष्टि से ही उपयुक्त या ठीक लगता है, अन्यथा नहीं ।

इसी सुविधा को ध्यान में रखते हुवे विसंगतियों को व्यक्तिगत और समष्टिगत इन दो मुख्य प्रकारों में रखा जा सकता है, जिनके आधार-पर व्यक्तिगत व्यंग्य और समष्टिगतक व्यंग्य की निर्मिति की जा सकती है। व्यक्तिगत व्यंग्य में कभी कभी आत्मव्यंग्य की झलक भी देखने मिलती है। समष्टिगत व्यंग्य में सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, प्रशासनिक, आर्थिक आदि के क्षेत्र की विसंगतियों को उद्घृत किया जा सकता है।

व्यक्तिगत व्यंग्य :

किसी एक व्यक्ति को केंद्र बनाकर जो व्यंग्य किया जाता है, उसे व्यक्तिगत व्यंग्य कहा जाता है। व्यक्तिगत व्यंग्य लिखना बहुत ही साहसका तथा ढाढसका कार्य है। व्यक्तिगत जलन, द्वेष, मत्सर के कारण किसी व्यक्ति विशेष पर व्यंग्य करना अमंगल,अशिव होता है। किसी व्यक्ति विशेष को लक्ष्य बनाकर व्यंग्य करने से किसी प्रचलित बुराई के प्रति समाज की घृणा उत्पन्न करने में व्यंग्यकार जब सफल होता है, तो वह व्यंग्य निश्चित रूपसे उपयुक्त साबित हो सकता है।

व्यक्तिगत व्यंग्य व्यक्तियों में पायी जानेवाली बुराइयों को दूर करने में निश्चित रूपसे सहायक बनता है। यह व्यंग्य इतना प्रभावी होता है कि, "एक बुरे आदमी को व्यंग्य का शिकार बनते देख दूसरे बुराई करनेवाले सावधान हो जाते है।" परिणामत: उस बुराई को मूल से निकाल देने के काम में सहायता मिल जाती है।

कभी कभी क्रोध में आकर व्यक्तिगत व्यंग्य इतना कठोर हो जाता है कि, उसका आघात लेखक स्वंय सहन नहीं कर पाता। इसलिये हमेशा इस बात का ख्याल रखना पडता है कि, जहाँपर व्यक्तिगत व्यंग्य लिखने की विशेष आवश्यकता होती है, वहाँ उसके तीखेपन की मात्रा का

उल्लंघन न किया जायें।

व्यंग्यकार में गहराई से महान आदर्शों और महान नैतिक मूल्योंकी घुसपैठ होती है। एक आदर्शपूर्ण जीवन जीने का निश्चय होता है। इसीलिये तो वह सारी दुनिया को अपने आदर्शों के दायरे में परखने का प्रयास करता है, जबभी कोई विसंगति, कोई विरोधी बात नजर आती है, तो उसका उपहास करते हुये उसपर व्यंग्य किया जाता है। व्यंग्यकार जब खुद के व्यवहार इन मान्य आदर्शों के प्रतिकूल पाता है, तब आत्मव्यंग्य भी करता है। यही स्थिति परसाई में देखने को मिलती है। वे अपने जैसे अनेक व्यक्तियोंपर चोट कर उन्हें सावधान भी कर देते हैं। बोलती रेखाएँ यह उनका संकलन इसी प्रकार के प्रयत्नों से भरा है।

समष्टिगत व्यंग्य :

पूरे समाज में पायी जानेवाली विशेष प्रवृत्तियों, दुर्बलताओं, विसंगतियोंपर समष्ठिगत व्यंग्य आधारित होता है। समाज के लोगों के जीवन के विविध क्षेत्रों में इसका अस्तित्व पाया जाता है। इसी विविधता को मद्दे नजर रखते हु समष्टिगत व्यंग्य निम्नलिखित स्थितियों मे सामने आ जाता है।

सामाजिक व्यंग्य :

यह समाज से संबंधित व्यंग्य होता है। समाज सें पायी जानेवाली कुरीतियों, रूढ़ियों तथा असंगतियोंपर जो व्यंग्य लिखा जाता है, उसे सामाजिक व्यंग्य कहा जाता है। द्विवेदी युग में इसीप्रकार के व्यंग्य की मात्रा अधिकता से देखने को मिलती है। समाज में फॅशन का रोग बुरीतरह से फैल गया है। लोग अपनी संस्कृति भूलकर विदेशी संस्कृति का अंधानुकरण कर रहे थे। ऐसे फॅशन परस्तों को लक्ष्य बनाकर नाथूराम

शर्मा `शंकर` ने व्यंग्य लिखा है।

सामाजिक व्यंग्य समाजसुधार की दृष्टि से भी लिखा गया है। सती प्रथा, बालविवाह, वर्णभेद, सांप्रदायिकता आदि कुरीतियों के खिलाफ ब्राम्होसमाज तथा आर्यसमाज ने बुलंद आवाज उठायी थी। विधवाओं के विवाह के लिये भी आंदोलन किये गये। इसी प्रकार के आंदोलन में भारतेंदुकालीन लेखकों ने व्यंग्य के माध्यम से विशेष सहयोग दिया है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। इसी नाते उसे समाज के नीति नियमों को निभाते हुवे, उनका पालन करते हुवे उनकी सारी कमजोरियों तथा न्यून्यताओं के संदर्भ में समझकर चलना पड़ता है। इस क्रिया में ऊँच-नीच का भेदभाव, जाति-बिरादरी, विभिन्न सामाजिक अंधविश्वास व्यक्ति को बिलकुल कमजोर, बेजान तथा जर्जर बनाते है। परिणाम स्वरूप व्यक्ति का केवल पूरा व्यक्तित्व ही नहीं, बल्कि मानवता के आदर्श, मान-मूल्य भी खतरे में पड जाते है। आज हम देखते हैं कि, प्राचीन काल में समाज के विकास के लिये बनायी गयी वर्णव्यवस्था विकृत अवस्था में अस्तित्व में है। अर्थात २० वी सदी में हमारी समाज व्यवस्था में कोई विशेष अच्छा फर्क नहीं आया है। सत्रहवीं, अठारहवीं सदी के समान आज भी हरिजनोंद्वारा मंदिर में प्रवेश, पनघटपर पानी भरना जैसी बातें निषिध्द है। जाति-बिरादरी का ढोंग आज भी लोगों के जीवन में नासूर बनकर विद्यमान है। ऐसी स्थिति केवल सामाजिक ही नहीं, बल्कि अत्यंत घृणास्पद मानवीय विसंगति के रूपमें हमारे सामने आ जाती है। सामाजिक विसंगतियों में वे सारे दोष आ जाते है, जिनके कारण समाज के लोग गलत ढंगसे प्रभावित होते हैं। प्रत्येक समाज में पायी जाने वाली ये विसंगतियाँ अलग अलग प्रकार की होती है, जिनकी क्रूरता, निर्भयता, तथा पीड़ा की पहचान उनके अपने खुद के

निजी संदर्भों में की जा सकती है। इसीके आधारपर ही सामाजिक व्यंग्य का स्वरूप निर्धारित किया जा सकता है।

धार्मिक अथवा सांप्रदायिक व्यंग्य :

भारत एक धर्मप्रधान देश है। प्राचीन काल से ही इस देश में विविध धर्म, अनेक प्रकारके मत-मतांतर तथा कितनी ही पूजा विधियाँ देखने को मिलती है। इसी धार्मिकता के कारण कुछ लाभ हुवे, तो उतनीही हानियाँ भी हुवी। इसी धर्म के कारण देश अनेक संप्रदायों में बँट गया। धर्म का प्रतिनिधित्व करनेवाले महंत लोग प्रमादी बन गये। धर्म की जड़ खोखली हो गयी, समाज में पाखंड विशेष रूपसे पनपने लगा। परिणामत: देशकी एकता में बाधा उत्पन्न हुवी और सभी ओर मिथ्याचार बढ़ने लगा। ऐसी स्थिति में धर्मसंबंधी व्यंग्य लिखा जाने लगा।

हिंदी साहित्य में धर्मसंबंधी व्यंग्य लिखनेवालों में कबीर सर्वप्रथम माने जाते है। उनकी सामाजिक चेतना इतनी तीव्र और प्रभावी थी कि, उन्होंने उपासना के बाह्य स्वरूपपर आग्रह करनेवाले और कर्मकांड को प्रधानता देनेवाले पंडितों और मुल्लाओं को भी व्यंग्य के माध्यम से खरी सुनाई। इसी प्रयास में उन्होंने लोगों को `राम-रहीम` की एकता को समझाकर हृदय को शुध्द तथा प्रेममय करने का सदुपदेश दिया। परंतु औचित्य का अभाव और भावुकता की अधिकता के कारण उनके व्यंग्य का प्रभाव लोगोंपर अधिक नहीं दिखायी दिया। दूसरी बात यह थी कि, जनता में विशेष प्रभाव हिंदू मत या पौराणिक धर्म का था। इसप्रकार हिंदी तथा अंग्रेजी में प्रारंभिक व्यंग्य धर्म से संबंधित ही मिलता है।

धार्मिक या सांप्रदायिक व्यंग्य में धर्म अथवा संप्रदाय को आधार बनाकर की जानेवाली अत्यंत अतार्किक हरकतें और क्रिया कलाप आते हैं।

प्राय: देखा गया है कि, अपने स्वार्थ के लिये शैतान भी शास्त्रों की मदद लेता है। उसीप्रकार तथाकथित धर्मपरायण भक्तजन भी अपनी स्वार्थ-साधना के लिये धर्म की सहायता लेते है। इस क्रिया में उनके द्वारा उठाये गये कदमों से धर्म को कितना ही नुकसान उठाना पड़ा है।

सांप्रदायिक विसंगतियाँ इन्सानी रिश्तों को झुठलाने का काम करती है। मानव-मर्म को आहत करनेवाली ये विसंगतियाँ अत्यंत दारूण और तकलीफ देह होती है। धार्मिक विसंगतियों का जन्म मनुष्य की कूपमंडक वृत्ति से होता है। अतिशय क्षुद्र स्वार्थपरता और धर्म के नामपर इन्सानियत भूल जाने के कलाकौशल से मनुष्य की ऐसी प्रवृत्ति को विशेष बल मिला। सभ्य संसार में भी धर्म और सांप्रदायिकता के क्षेत्र में ये विसंगतियाँ हीन मानसिकता, स्वार्थपरता तथा अमानवीयता के रूपमें देखने को मिलती है। इसीलिये उन्हें धार्मिक व्यंग्य के माध्यम से व्यक्त करना पडता है।

सांस्कृतिक व्यंग्य :

किसी बाह्य संस्कृतिद्वारा जब देश संस्कृतिपर आक्रमण होता है, विदेशी संस्कृति का देशी संस्कृतिपर विशेष प्रभाव देखने को मिलता है। तब सांस्कृतिक क्षेत्र में विसंगतियाँ निर्माण होती है। अंग्रेजोद्वारा थोपी गयी संस्कृतिपर किया गया व्यंग्य उर्दू के प्रसिध्द शायर जनाब अकबर इलाहीवादी की शायरी में देखने को मिलता है।

सांस्कृतिक विसंगतियों के कारण राष्ट्र की निजी संस्कृति क्षीण होती है, और एक कृत्रिम संस्कृति जन्म लेती है। ऐसी संस्कृति की ओर सांस्कृतिक व्यंग्य के द्वारा संकेत किया जाता है। आर्यसमाजी भजनों में फिल्मी विदेशी संगीत धुनों का प्रवेश, अपनी भाषा के स्थानपर विदेशी

भाषा का अनावश्यक मोह, और अपनी परंपरागत वेशभूषा को त्याज्य मानकर पाश्चात्य पहनावेपर मर मिटने की प्रवृत्ति आदि बातें सांस्कृतिक व्यंग्य का विषय बन सकती है। संस्कृति में जब नैतिकता विशेष आवश्यक होती है, तब उसपर कटाक्ष के लिये तीखे व्यंग्य और आक्रमण की आवश्यकता होती है।

साहित्य संबंधी व्यंग्य :

साहित्य के क्षेत्र में नजर आनेवाली विसंगतियों को साहित्यिक व्यंग्य के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इसीलिये तो संस्कृत, हिंदी, अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं में साहित्य संबंधी व्यंग्य प्रचुर मात्रा में दिखायी देता है। साहित्य में प्रचलित कोई विशेष प्रवृत्ति, भाषासंबंधी आग्रह, समालोचक तथा साहित्यिक चोरी आदि साहित्यिक व्यंग्य के विषय रहे है। साहित्यिक व्यंग्य के माध्यम से साहित्यकारों के मतभेदों को भी प्रस्तुत किया जाता है। विभिन्न मतों का अवलंब करनेवालों ने एक दुसरेपर व्यंग्य किया है, इसीप्रकार का उदाहरण संस्कृत साहित्य में पाये जाते हैं। शास्त्रार्थ में भी व्यंग्य की सहायता ली गयी है।

राजनैतिक व्यंग्य :

राजनीति के क्षेत्र में अवसरवादिता, टालमटोल, कुत्सित चुनाव सरगरमियों के साथ-साथ मताकांक्षी तथा मतदाता के संबंधो के कारण राजनीतिक विसंगतियाँ निर्माण होती है। इस क्षेत्र की विशेषता यह है कि, बिना धन और बिना जनता के कोई काम हो ही नहीं सकता। शायद इसीलिये ही चुनाव लडनेवालों को धन और वोट का अद्भूत सामंजस्य रखना पडता है। क्षण-क्षण में दल बदलनेवाली आज की नीतिहीन राजनीतिका जब जन्म होता है, तो सही आदमी को गलत साबित करनेकी कोशिशें होने लगती है। राजनीतिक क्षेत्र के साथ राजनीतिक व्यक्तित्वों में

भी कुछ न कुछ विसंगतियाँ दिखायी देती है, जो राजनीतिक व्यंग्य के विषायों में आ जाती है। ऐसे व्यक्तित्वों का जनता के दिल में एक डर सा बैठ जाता है और साथ में देश की प्रगति में रुकावटें भी पैदा हो जाती है। हिंदी साहित्य में पाया जानेवाला अधिकांश व्यंग्य भारतीय राजनीति के विभिन्न पक्षों को अपनी सीमाओं में अच्छीतरह से उजागर करता है।

ब्रिटीशों के शासन- काल में अंग्रेजी शासन के विरोध में व्यंग्य के माध्यम से बहुत कुछ लिखा गया। अतिशय सरलता से अपना उद्देश पूरा करने की क्षमता राजनैतिक व्यंग्य में होती है। राजनीति में होनेवाली असंगतियों के प्रति आक्रोश के भाव जनता में पहले से ही विधमान होते है और जब व्यंग्यकार इन्हीं असंगतियों की ओर संकेत करते हुवे इनपर चोट करता है, तो तुरंत अनुकुल तथा आशाजनक प्रतिसाद जनता से मिल जाता है। लोकप्रियता की दृष्टि से सोचा जाये तो राजनीतिक व्यंग्य प्रथम कोटि में आता है। केवल तटस्थ द्रष्टा ही ऐसा राजनैतिक व्यंग्य लिख सकेगा, जिसका साधारणीकरण अति सरलता से हो सकेगा, ~~जिसका साधारणीकरण अति सरलता से हो सकेगा~~। जिस व्यक्ति की आँखोंपर किसी विशेष राजनीतिक दल का चश्मा चढ़ा हुआ होगा, उससे प्रभावकारी व्यंग्य की आशा करना बिल्कुल व्यर्थ होगा।

प्रशासनिक व्यंग्य :

प्रशासनिक विसंगतियाँ केवल शासन का संचालन करनेवाली शक्तियोंतक ही सीमित होती है। लालफीताशाही, रिश्वतखोरी सिध्दांत और प्रत्यक्ष कार्यप्रणाली में जमीन आसमान का अंतर आदि बातें प्रशासनिक विसंगतियों के अंतर्गत आती है। शासन प्रणाली में जिन व्यक्तियों और कर्मचारियों का योगदान विशेष आवश्यक होता है, वहीं लोग जब प्रशासनिक उद्देश्यों के प्रति उदासीन हो जाते है, तब ऐसी विसंगतियाँ

संपूर्ण शासनव्यवस्था को कमजोर बनाती है, शासन व्यवस्था का ढाँचा बिल्कुल खोखला होता है। ऐसे समय प्रशासनिक व्यंग्य के माध्यम से स्थिति को सँभालने का प्रयास किया जाता है।

आर्थिक व्यंग्य :

सामान्यत: समाज के लोगों मे आर्थिक विषमता के कारण अंतर दिखायी देता है। इसी अंतरके कारण समाज के अमीर तथा गरीब लोगों में आर्थिक विसंगतियाँ निर्माण होती हैं। आर्थिक विसंगतियों के कारण ही व्यक्ति व्यक्तियों में विषमता की बहुत बड़ी दरार निर्माण हो जाती है। आर्थिक विसंगतियों का प्रादुर्भाव समाज में आर्थिक न्याय का अभाव, मजदूरों को पूरी मजदूरी न मिलना, दीन और विपन्न व्यक्तियों का बुरी तरह से शोषण, बँधुआ मजदूरी और साथ में 'कुछ न करें सो बड़ा आदमी' वाली प्रवृत्ति के कारण होता है। आर्थिक विसंगतियों को आर्थिक व्यंग्य के माध्यम से व्यक्त करने का काम आज का प्रगतिशील साहित्य कर रहा है।

बदला हुआ समय तथा बदले हुवे परिवेश के संबंध के साथ व्यंग्य के विशेष उद्देश्यों में भी परिवर्तन आता गया। परिणामत: व्यंग्य में विविधता और मार्मिकता की मात्रा और बढ़ गयी। इसीलिये तो व्यंग्य के उपर्युक्त वर्गीकरण के साथ साथ और कितने ही विषयों से हम परिचित हो गये। वैसे तो ये विषय उपर्युक्त वर्गीकरण में कहीं न कहीं जरूर दिखायी दिये है, फिर भी सूक्ष्मता की दृष्टि से उनका उल्लेख करना और भी जरूरी बनता है।

समाज में या राजनीति में नेताओं का एक ऐसा वर्ग पाया जाता है, जो स्वतंत्रता की प्राप्ति के बाद मंत्री बन गये है। जिनका अपने जीवन के अतीत से कोई संबंध नहीं है, न किसी शैक्षणिक योग्यता की आवश्यकता है, ऐसे लीडरों पर व्यंग्य किया गया है।

केवल अर्थ-संग्रह करना ही जिनके जीवन का मूल और मुख्य उद्देश्य है, ऐसे नेता लोग भ्रष्टाचारकी दलदल में और भी फँसते गये । ऐसे ढोंगी नेताओं की करनी और कथनी में विशेष अंतर आया । इन नेताओं का खद्दरका पहनावा भ्रष्टाचार करने के लिये कवच के रूपमें साबित हुआ, तो ऐसे भ्रष्टाचारी व्यंग्य के लक्ष्य बने ।

स्वातंत्र्यपूर्व काल में त्याग और बलिदान ही जिनके जीवन के मूल्य थे, ऐसे देशप्रेमियों की वृत्ति में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद बदलाव आया । पदलिप्सा, स्वार्थपरता, तथा कुत्सित मनोवृत्ति से युक्त ये नेता पूँजीवादी सेठों के दलाल बन गये । चुनाव लड़ने के लिये उनसे धन लेकर अनैतिक कार्यों में वे सेठ लोगों की सहायता करने लगे ।

जनता को मूर्ख बनाना नेता का विशेष गुण या अवगुण माना गया है । जनता को आश्वासन देना उसके लिये बहुत ही सहज काम है । अपने असली रूपसे बाह्य आचरण अलग रखनेवाले, खद्दर पहननेवाले ये नेता खुद को देशभक्त बताते थे । ऐसे ढोंगियों पर भी व्यंग्य किया गया है । इसीप्रकार के नेताओं का दु:ख भी दिखावटी होता है । अपने भाषण में दीनदुखियों के प्रति सहानुभूति प्रकट करते है, पददलितों के उध्दार की बड़ी बड़ी बातें करते हैं, समयानुसार आँसू भी बहाते है, और अपना जीवन शान-शौकत से बिताते है । आलिशान बंगलों में रहनेवाले ये नेता लोग विदेशी कारों में घूमते है, हवाई जहाजों में सैर करते है । इन्हीं को व्यंग्य का विषय बनाया गया है । इसप्रकार नेता या मंत्रियों को लक्ष्य बनाकर पिछले सात दशकों में प्रचुर मात्रा में व्यंग्य लिखा गया है, जिसमें मार्मिकता अधिकता देखने मिलती है ।

भाषण देना एक कला है । पर उसका दुरूपयोग करते हुवे, जनता को मूर्ख बनाने के लिये, लंबे-चौडे और आश्वासन भरे भाषण दिये जाते है । अर्थात आज भाषण देने का रोग समाज में बुरीतरह से व्याप्त है ।

इसी ओर संकेत करते समय व्यंग्यकार का आक्रोश इतना तीव्र होता है कि, वह क्रोध का रूप धारण करता है। परिणामस्वरूप व्यंग्य अधिक तीक्ष्ण बनता है।

संस्थाओं के नाम से, सुरक्षा कोष के नाम से या अन्य किसी कारण से लोग चंदा इकट्ठा करते है और उसे खुद खा जाते है, अपने व्यक्तिगत कार्यों के लिये उसका उपयोग करते है। व्यंग्यकार इस असामाजिक प्रवृत्तिपर व्यंग्य करते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राजनीति के क्षेत्र में कुछ विशेष परिवर्तन हुआ है। चुनाव के समय मतदान के पूर्व मतदाता की खुशामद की जाती है और बाद में उपेक्षा। इसप्रकार की कुप्रवृत्तियों के कारण चुनाव प्रणाली में आयी विकृतिपर व्यंग्यद्वारा प्रकाश डाला गया।

आधुनिक राजनीति में दल-बदल की हवा बडी जोर से बहने लगी है। विधायक सत्ता के मोह में लोग दल-परिवर्तन में विशेष विश्वास रखने लगे है। लोग ऐसे दल बदलते हैं, जैसे कपडे बदलते हैं। ऐसी हालत में नैतिकता का लोप होने लगा और राजनीति में संकट आ गया, जिसे व्यंग्यद्वारा व्यक्त किया गया।

सरकारी कार्यालयों तथा ऑफिसों में काम करनेवाले स्वेच्छाचारी अफसरों पर भी तीखा व्यंग्य कसा गया है। खुले आम भ्रष्टाचार करनेवाले, भाई-भतीजावाद को माननेवाले तथा पक्षपाती अफसरों का नैतिक पतन होने लगा था। वे अपने आप को जनता के सेवक मानने के स्थानपर मालिक मानने लगे थे। ऐसे अफसर अपने अधीन कर्मचारियों के साथ शोभा न देनेवाला व्यवहार करने लगे थे। ऐसे अफसर व्यंग्य का शिकार बन गये।

प्रांतीयता की भावना को विशेष प्रवृत्ति के रूपमें अपनानेवाले

कुछ अफसरों ने अपने प्रांत के कर्मचारियों को अधिक लाभान्वित किया, तो दूसरे प्रांतों के कर्मचारियों को दंडित किया । नियुक्ति,पदोन्नति तथा स्थानांतरण में प्रांतीयता का अधिक विचार करनेवाले अफसरों पर व्यंग्य किया गया ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद योजनाबध्द आर्थिक विकास की दृष्टि से पंचवार्षिक योजनाएँ बनायी गयीं । इन योजनाओं को बनानेवाले करोंडो रूपये वेतन तथा भत्तों के रूपमें गये, परंतु उनका कागजी रूप ही प्रमुख रहा । फाइलोंपर ही खेती होने लगी,फसलें उगने लगी । इस बात को भी व्यंग्य का विषय बनाया गया ।

राजनीतिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में भ्रष्टाचार फैल गया । रक्षक भक्षक बना । जो कानून के निर्माता तथा रखवाले थे, वे ही कानून को तोडने लगे । दवाईयाँ तथा खाद्यपदार्थों में मिलावट होने लगी । मिलावट कर के तिजोरी भरने की व्यापारियों की बुरी प्रवृत्ति पर व्यंग्य किया गया ।

शैक्षणिक योग्यता तथा प्रतिभा के अभाव में भी कुछ लोग उच्च स्थानों पर बैठ गये, अच्छा वेतन पाने लगे । शिफारस की इस वृत्ति की ओर भी व्यंग्य के माध्यम से संकेत किया गया ।

साहित्य के क्षेत्र में भी राजनीति की तरह दलबंदी आरंभ हुवी थी, उससे कुछ आलोचक महंत बन गये । और एक दूसरे को नीचा दिखाने की प्रवृत्ति पनपने लगी । यह बात व्यंग्यकार की नजर से नहीं छूटी और उसपर भी व्यंग्य किया गया । आलोचक का काम होता है, रचना की चीरफाड़ कर के उसके गुणदोषों का उल्लेख करते हुवे रचना का मूल्यांकन करना । परंतु जब वह सत्य का मार्ग छोडकर पक्षपाती बन जाता है, तो वह भी आलोचना का पात्र बन जाता है ।

आज हम इस स्थिति का भी अनुभव लेते हैं कि, हिंदी का प्रचार करने के लिये आयोजित कवि-सम्मेलनों की दशा बिगड़ती गयी है। एक तरह से वे अर्थ लाभ के साधन बन गये हैं। कविता की श्रेष्ठता की जगह गलेबाजी को महत्व प्राप्त हुआ, तो इस ओर संकेत करना जरूरी बन गया। इसी जरूरत को पूरा करते समय व्यंग्यको ही अपनाया गया।

हिंदी हमारी राष्ट्रभाषा है। परंतु इस पदपर पूर्ण रूपसे प्रतिष्ठित होने में अंग्रेजी बाधक रही है। यह अंग्रेजी उच्चस्तरीय परिक्षाओं, साक्षात्कारों, सरकारी दफ्तरों में, न्यायालयों में, विश्वविद्यालयों मे अपना इतना प्रभाव जमाये बैठी है कि, उसके बढते प्रभाव को व्यंग्य के माध्यम से व्यक्त करना ही पड़ा।

प्रकाशक लेखकों का शोषण करते हैं। एक तरहसे वे लेखकों की प्रतिभाका क्रय ही करते हैं। पैसे के लिये अश्लील तथा अनैतिक साहित्य का प्रकाशन करते हुवे जनता की रूचि को विकृत बनानेवाले प्रकाशक भी व्यंग्य के कटाक्ष से नहीं छूटे।

आधुनिक सभ्यता के नामपर, पाश्चात्यों के प्रभाव से शहरी संस्कृति में जो कृत्रिमता आयी है, वह भी व्यंग्य से व्यक्त की गयी। पौराणिक प्रतीकों के माध्यम से आधुनिक समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार और अराजकता पर व्यंग्य किया गया है। इतनी सारी चर्चा और विषयों-की विविधता को देखने के बाद हम निश्चित रूपसे कह सकते है कि, व्यंग्य का क्षेत्र काफी विस्तृत हो गया है। दो टूक कहनेवाले व्यंग्यकार का व्यंग्य पहले से अधिक प्रभावकारी हो गया है और उसकी दिशाएँ भी विस्तारित हुवी है।

एक सफल व्यंग्यकार के नाते अपना उत्तरदायित्व निभानेवाले हरिशंकर परसाई और उनके व्यंग्य में पायी जानेवाली विविधता का अनुभव करते समय उपर्युक्त विविध व्यंग्य प्रकारों से सहायता मिलेगी। इसीके आधारपर ही परसाईजी द्वारा लिखी गयी कहानियों मे जो व्यंग्यका स्वरूप है, उसे निर्धारित किया जा सकेगा।

तृतीय अध्याय

संदर्भ सूची

१) ‘हिंदी नाट्य - साहित्य में हास्य - व्यंग्य’
डा. सभापति मिश्र । पृ.३६

२) ‘व्यंग्य के मूलभूत प्रश्न’ - शेरजंग गर्ग । पृ.२९-३०

३) ‘आधुनिक हिंदी काव्य में व्यंग्य -
डा. बरसानेलाल चतुर्वेदी । पृ.११

४) ‘कबीर’ - आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी । पृ.१६४

५) ‘काग -भगोड़ा’ - हरिशंकर परसाई
प्रस्तावना में से - कांतिकुमार जैन । पृ.१२

६) ‘सदाचार का तावीज’ - हरिशंकर परसाई । पृ.७

७) ‘सदाचार का तावीज’ - हरिशंकर परसाई । पृ.८